बाल विज्ञान

चतुर्थ-भाग

रचयिता
संकलन-सम्पादन
प्रज्ञा श्रमण मुनि अमितसागर

प्रज्ञाश्रमण मुनि

प्रकाशक
श्री धर्मश्रुत शोध संस्थान,
श्री दिगम्बर जैन रत्नत्रय मन्दिर नसिया जी
कोटला रोड़, फिरोजाबाद (उ०प्र०)

कृति – बाल विज्ञान, चतुर्थ-भाग, पुष्प संख्या - नवम

कृतिकार - प्रज्ञा श्रमण मुनि अमितसागर

पावन प्रसंग – बीसवीं शताब्दी के प्रथम दिगम्बर जैन आचार्य चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तिसागर जी महाराज के तृतीय पट्टाधीश आचार्य शिरोमणि श्री धर्मसागर जी महाराज के जन्म शताब्दी वर्ष १९१३-२०१४ के उपलक्ष्य में प्रकाशित।

[पुस्तक प्राप्ति स्थान]

१. चन्द्रा कापी हाऊस, हास्पिटल रोड, आगरा (उ० प्र०)

२. वास्ट जैन फाउण्डेशन ५९/२ बिरहाना रोड़ , कानपुर (उ० प्र०)
मो० : 09451875448

३. आलोक जैन, हनुमानगंज
c/o श्री दिगम्बर जैन रत्नत्रय मन्दिर नसिया जी, कोटला रोड़,
फिरोजाबाद (उ० प्र०) मो०: 09997543415

४. आचार्य श्री शिवसागर ग्रन्थमाला, श्री शान्तिवीर नगर,
श्री महावीर जी, जि० करौली (राज०)

५. श्री दि० जैन अष्टापद तीर्थ, विलासपुर चौक, धारूहेड़ा,
गुडगांव (हरि०) मो०: 09312837240

६. आर्ष ग्रन्थालय, जैन बाग, सहारनपुर (उ० प्र०)
मो०: 09410874703

७. विशुद्ध ग्रन्थालय, सर्वऋतु विलास, उदयपुर (राजस्थान)

कम्पोजिंग - वर्धमान कम्प्युटर, फिरोजाबाद (यू०पी०)

संशोधित संस्करण -प्रथम; सन् २०१४,

प्रतियाँ - २०००

मूल्य - २५ रूपये

मुद्रक - चन्द्रा कापी हाऊस, आगरा (उ० प्र०) मो० : 09412260879

बाल विज्ञान

भाग ४

१. नव देवता स्तवन

रचयित्री - गणिनी आर्यिका स्याद्वादमती माता जी

दोहा

परमेष्ठी पाँचों नमूँ, जिनवाणी उरलाय ।
जिन मारग को धारकर, चैत्य - चैत्यालय ध्याय ॥

(तर्ज - अहो जगतगुरु देव; सुनियो.....)

अरिहन्त प्रभु का नाम, है जग में सुखदाई ।
घाति चतु क्षयकार, केवल ज्योति पाई ॥
वीतराग सरवज्ञ, हित - उपदेशी कहाये ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो नित भक्ति सुध्याये ॥१॥

सिद्ध प्रभु गुणखान, सिद्धि के हो प्रदाता ।
कर्म आठ सब काट, करते मुक्ति वासा ॥
शुद्ध बुद्ध अविकार, शिव सुखकारी नाथा ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो नित नावे माथा ॥२॥

आचारज गुणकार, पञ्चाचार को पाले ।
शिक्षा-दीक्षा प्रधान, भविजन के दुख टाले ॥
अनुग्रह - निग्रह काज, मुक्ति मारग चलते ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो आचारज भजते ॥३॥

ज्ञान - ध्यान लवलीन, जिनवाणी रस पीते ।
अध्ययन-शिक्षा प्रदान, संघ में जो नित करते ॥
रत्नत्रय गुणधाम, उपदेशामृत देते ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो नित उवज्झाय भजते ॥४॥

दर्शन ज्ञान चरित्र, मुक्ति मार्ग कहाये ।
तिन - प्रति साधन रूप, साधु दिगम्बर भाये ॥
विषयाशा को त्याग, निज आतम चित पागे ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो नित साधु सुध्यावे ॥५॥

तत्त्व, द्रव्य, गुण सार, वीतराग मुख निकसी ।
गणधर ने गुणधार, जिनमाला इक गूंथी ॥
"स्याद्वाद", चिन्ह सार, वस्तु अनेकान्त गाई ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो जिनवाणी ध्याई ॥६॥

सम्यक् श्रद्धा सार, देव - शास्त्र - गुरु भाई ।
सम्यक् तत्त्व विचार, सम्यक् ज्ञान कहाई ॥
सम्यक् होय आचार, सम्यक् चारित गाई ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो जिन मारग धाई ॥७॥

वीतराग जिनबिम्ब, मूरत हो सुखदाई ।
दर्पण सम निजबिम्ब, दिखता जिसमें भाई ॥

कर्म कलंक नशाय, जो नित दर्शन पाते ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो नित चैत्य को ध्याते ।।८।।

वीतराग जिनबिम्ब, कृत्रिमाकृत्रिम जितने ।
शोभत हैं जिस देश, हैं चैत्यालय उतने ।।
उन सबकी जो सार, भक्ति महिमा गावे ।
ऋद्धि - सिद्धि सब पाय, जो चैत्यालय ध्यावे ।।९।।

दोहा

नव देवता को जित भजे, कर्म कलंक नशाय ।
भव सागर से पार हो, शिव सुख में रम जाय ।।

नोट - प्रतिदिन प्रातः पाठ करने से जीवन सुख, शान्ति और समृद्धि को प्राप्त होता है ।

२. कर्म

प्रश्न १ - कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव के रागद्वेषादि परिणामों के कारण; जो कर्मरूप पुद्गल - वर्गणायें जीव के साथ बंध को प्राप्त होती है, उन्हें कर्म कहते हैं अर्थात् जिनका निमित्त पाकर जीव; सुख - दुःख का अनुभव करता है, उन्हें कर्म कहते हैं ।

प्रश्न २ - कर्म कितने प्रकार का है ?

उत्तर - कर्म ३ प्रकार का है - १. द्रव्य कर्म; २. नोकर्म; ३. भावकर्म ।

द्रव्यकर्म - १.ज्ञानावरणी; २.दर्शनावरणी; ३.वेदनीय; ४.मोहनीय; ५.आयु; ६.नाम; ७.गोत्र; ८.अन्तराय; ये ८ द्रव्य कर्म के भेद हैं ।

इन आठों कर्मों में १. ज्ञानावरणी; २. दर्शनावरणी; ३. मोहनीय; ४. अन्तराय; ये चार घातिया कर्म हैं और १. वेदनीय, २. नाम, ३. गोत्र, ४. आयु; ये चार अघातिया कर्म हैं ।

भावकर्म - रागद्वेष तथा क्रोधादि कषायें; भावकर्म हैं ।

नोकर्म - छः पर्याप्ति और तीन शरीर के ग्रहण योग्य पुद्‌गल परमाणुओं को नोकर्म परमाणु कहते हैं एवं उनसे जिन 'छः पर्याप्ति एवं तीन शरीरों की' रचना होती है, उन्हें नोकर्म कहते हैं ।

प्रश्न ३ - छः पर्याप्ति एवं तीन शरीरों के नाम बताइये ?

उत्तर - १. आहार पर्याप्ति; २. शरीर पर्याप्ति; ३. इन्द्रिय पर्याप्ति; ४. श्वांसोच्छवास पर्याप्ति; ५. भाषा पर्याप्ति; ६. मनः पर्याप्ति, ये छः पर्याप्तियाँ हैं ।

१. औदारिक शरीर; २. वैक्रियिक शरीर; ३. आहारक शरीर; ये तीन शरीर हैं, ये सब मिलकर नोकर्म होते हैं ।

प्रश्न ४ - ज्ञानावरण कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो आत्मा के ज्ञान गुण का घात करता है, उसे ज्ञानावरण कर्म कहते है । जैसे-आकाश में बादल सूर्य को ढ़क देते हैं, वैसे ही ज्ञानावरण कर्म; जीव के ज्ञान को प्रकट नहीं होने देता । इस कर्म के ५ भेद हैं-१.मतिज्ञानावरण; २.श्रुतज्ञानावरण; ३.अवधिज्ञानावरण; ४.मनः पर्ययज्ञानावरण; ५. केवलज्ञानावरण ।

प्रश्न ५ - दर्शनावरण कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो आत्मा के दर्शन गुण का घात करता है, उसे दर्शनावरण कर्म कहते हैं । जैसे - मंदिर में भगवान के दर्शन की इच्छा है पर; पहरेदार बाहर ही रोक देता है; अन्दर नहीं जाने देता है । उसी प्रकार यह कर्म; जीव को आत्मा के गुणों का दर्शन नहीं होने देता है । इस कर्म के नौ भेद हैं - १. चक्षुदर्शनावरण; २.अचक्षुदर्शनावरण; ३. अवधिदर्शनावरण; ४. केवलदर्शनावरण; ५. निद्रा; ६. निद्रा-निद्रा; ७. प्रचला; ८. प्रचला - प्रचला; ९. स्त्यानगृद्धि ।

प्रश्न ६ - वेदनीय कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिस कर्म के उदय से जीव; सुख-दु:खरूप आकुलता को प्राप्त होता है, उसे वेदनीय कर्म कहते हैं । जैसे - इष्ट वस्तु की प्राप्ति होने पर – इच्छा की पूर्ति होने पर, जीव हर्ष को प्राप्त होता है और रोग होने पर – अनिष्ट वस्तु की प्राप्ति होने पर, जीव दु:ख – आकुलता को प्राप्त होता है । वेदनीय कर्म के दो भेद हैं - १.साता वेदनीय; २.असाता वेदनीय । जैसे - शहद लपेटी तलवार; जीभ से चाँटने पर शहद का मीठा स्वाद तो मिलता है, किन्तु असावधानी से जीभ कटने से कष्ट का भी अनुभव होता है । ठीक इसी प्रकार सातावेदनीय से सुख का एवं असातावेदनीय से दु:ख का अनुभव होता है ।

प्रश्न ७ - मोहनीय कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिस कर्म के उदय से जीव के सम्यक्त्व और चारित्रगुण का घात होता है, उसे मोहनीय कर्म कहते हैं । जैसे - मदिरा को पीने वाला व्यक्ति नशे में; माँ को माँ और माँ को पत्नी भी कहता है । वैसे ही मोही जीव; सम्यक्त्व और चारित्र से गिर जाता है । इसके दो भेद हैं - १. दर्शन मोहनीय; २.चारित्र मोहनीय । दर्शन मोहनीय हलाहल विष के समान है । इसके तीन भेद हैं - १. मिथ्यात्व; २. सम्यक् मिथ्यात्व; ३.सम्यक् प्रकृति । चारित्र मोहनीय कर्म भी एक जहर है । इसके २५ भेद हैं -

१. अनन्तानुबन्धी क्रोध; २. मान; ३. माया; ४. लोभ ।
५. अप्रत्याख्यान क्रोध; ६. मान; ७. माया; ८. लोभ ।
९. प्रत्याख्यान क्रोध; १०. मान; ११. माया; १२. लोभ ।
१३. संज्वलन क्रोध; १४. मान; १५. माया; १६. लोभ ।
१७. हास्य; १८. रति; १९. अरति; २०. शोक; २१. भय;
२२. जुगुप्सा; २३. स्त्रीवेद; २४. पुरुष वेद; २५. नपुंसक वेद ।

प्रश्न ८ - आयु कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिस कर्म के उदय से आत्मा; देव, नारकी, तिर्यञ्च और मनुष्य के शरीर में रुका रहता है, उसे आयु कर्म कहते हैं । जैसे - जेल (कारागृह) में जिस जीव को जितने दिन की सजा है, उतने दिनों तक वह बाहर नहीं जा सकता है । उसी प्रकार आयु कर्म; जीव को एक पर्याय में रोके रखता है । आयु कर्म के ४ भेद हैं - १. नरक आयु; २. तिर्यञ्च आयु; ३. मनुष्य आयु; ४. देव आयु ।

प्रश्न ९ - नाम कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिस कर्म के उदय से जीव का आकार नारकी, तिर्यञ्च, देव, मनुष्य आदि रूप बनता है, उसे नाम कर्म कहते हैं । जैसे - चित्रकार अनेक प्रकार के चित्र बनाता है । उसी प्रकार नाम कर्म भी जीव के नाना प्रकार के आकार बनाता है । नाम कर्म के ९३ भेद हैं –

चार गति - १. नरक; २. तिर्यञ्च; ३. मनुष्य; ४. देव ।

पाँच जाति - ५.एकेन्द्रिय; ६.द्विन्द्रिय; ७.त्रीन्द्रिय; ८.चतुरिन्द्रिय; ९. पंचेन्द्रिय ।

पाँच शरीर - १०. औदारिक; ११. वैक्रियिक; १२. आहारक; १३. तैजस; १४. कार्माण ।

तीन आंगोपांग - १५. औदारिक; १६. वैक्रियिक; १७. आहारक ।

एक निर्माण - १८. निर्माण ।

पाँच बन्धनकर्म - १९. औदारिक बंधन; २०. वैक्रियिक बंधन; २१. आहारक बंधन; २२. तैजस बंधन; २३. कार्माण बंधन ।

पाँच संघात - २४. औदारिक; २५. वैक्रियिक; २६. आहारक; २७. तैजस; २८. कार्माण ।

छह संस्थान - २९.समचतुरस्त्र संस्थान; ३०.न्यग्रोधपरिमंडल संस्थान; ३१. स्वाति संस्थान; ३२. कुब्जक संस्थान; ३३. वामन संस्थान; ३४. हुण्डक संस्थान ।

छह संहनन - ३५.वज्रर्षभनाराच संहनन; ३६.वज्रनाराच संहनन;

३७. नाराच संहनन; ३८. अर्द्धनाराच संहनन; ३९. कीलक संहनन; ४०. असम्प्राप्तसृपाटिका - संहनन ।

पाँच वर्ण कर्म - ४१. कृष्ण; ४२. नील; ४३. रक्त; ४४. पीत; ४५. श्वेत ।

दो गंध - ४६. सुगन्ध; ४७. दुर्गन्ध ।

पाँच रस कर्म - ४८. खट्ठा; ४९. मीठा; ५०. कडुआ; ५१. कषायला; ५२. चरपरा ।

आठ स्पर्श - ५३. हल्का; ५४. भारी; ५५. ठण्ड़ा; ५६. गरम; ५७. रूखा; ५८. चिकना; ५९. कड़ा; ६०. नरम; ।

चार आनुपूर्व्य - ६१. नरक; ६२. तिर्यञ्च; ६३. मनुष्य; ६४. देव; ६५. अगुरुलघु; ६६. उपघात; ६७. परघात; ६८. आतप; ६९. उद्योत; ७०. उच्छ्वास ।

दो विहायोगति - ७१. एक मनोज्ञ; ७२. दूसरा अमनोज्ञ; ७३. त्रस; ७४. स्थावर; ७५. बादर; ७६. सूक्ष्म; ७७. पर्याप्त; ७८. अपर्याप्त; ७९. प्रत्येक; ८०. साधारण; ८१. स्थिर; ८२. अस्थिर; ८३. शुभ; ८४. अशुभ ; ८५. सुभग; ८६. दुर्भग; ८७. सुस्वर; ८८. दुस्वर; ८९. आदेय; ९०. अनादेय; ९१. यशकीर्ति; ९२. अयशकीर्ति; ९३. तीर्थङ्कर ।

उच्च

प्रश्न १० - गोत्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसके उदय से जीव का उच्च-नीच कुल में जन्म हो है, उसे गोत्र कर्म कहते हैं । जैसे - कुम्भकार छोटे - बड़े घड़े बनाता है । वैसे ही गोत्र कर्म छोटे-बड़े (नीच-उच्च) कुल में उत्पन्न कराता है । इस कर्म के दो भेद हैं - १. उच्च गोत्र; २. नीच गोत्र ।

प्रश्न ११ - अन्तराय कर्म किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिस कर्म के उदय से दान आदि कार्यों में विघ्न आवे, उसे अन्तराय कर्म कहते हैं । जैसे - भण्डारी देने नहीं देता है या कंजूस दान नहीं

देता है। वैसे ही अन्तराय कर्म भी देने में विघ्न करता है। इसके पाँच भेद हैं- १.दानान्तराय; २.लाभान्तराय; ३.भोगान्तराय; ४.उपभोगान्तराय; ५. वीर्यान्तराय ।

प्रश्न १२ - एक बालक बहुत पढ़ता है, स्वाध्याय सुनता है फिर भी उसको याद नहीं रहता है क्यों ?

उत्तर - बालक को ज्ञानावरण कर्म का तीव्र उदय है, इसलिए याद नहीं रहता है ।

प्रश्न १३ - अनिल भगवान के दर्शन के लिए मन्दिर गया, पर दरवाजा बन्द था; दर्शन नहीं हुए क्यों ?

उत्तर - अनिल को भगवान के दर्शन नहीं हुए, क्योंकि अनिल को दर्शनावरणी कर्म का उदय है ।

प्रश्न १४ - एक बालक बहुत बीमार रहता है, उसके किस कर्म का उदय है ?

उत्तर - उस बालक के वेदनीय (असाता) कर्म का उदय है ।

प्रश्न १५ - एक माँ का पुत्र; विदेश गया है, उसकी माँ; उसकी याद आते ही रोती है, क्यों ?

उत्तर - माँ को मोहनीय कर्म का उदय है ।

प्रश्न १६ - एक जीव नारकीय, देव, तिर्यञ्च, मनुष्य पर्यायों में भटकता है, क्यों ?

उत्तर - नाना गतियों में जीव; आयु कर्म के उदय से भटकता है ।

प्रश्न १७ - कोई जीव का बहुत सुन्दर शरीर है और कोई कुरूप है किस कर्म के उदय से ?

उत्तर - सुभग नाम कर्म के उदय से सुन्दर और दुर्भग नाम कर्म के उदय से कुरूप शरीर मिलता है ।

प्रश्न १८ - कोई उच्च कुलीन है; कोई नीच कुल वाला है, यह किस कर्म के उदय से ?

उत्तर - गोत्र कर्म के उदय से ।

प्रश्न १९ - एक व्यक्ति दान देना चाहता है; पर दे नहीं पाता, किस कारण से ?

उत्तर - दानान्तराय कर्म के उदय के कारण।

प्रश्न २० - भोजन में अन्तराय आने से मुनिराज, आर्यिका, त्यागीवृन्द आदि आहार छोड़ देते हैं, किस कर्म के उदय से ?

उत्तर - लाभान्तराय कर्म के उदय से आहार के लिए जाने पर भी आहार का लाभ मुनियों, त्यागियों को नहीं मिलता है।

प्रश्न २१ - इन कर्मों में सबसे अच्छा कर्म कौन - सा है ?

उत्तर - कर्म आठों ही दुःखरूप हैं, कोई भी कर्म अच्छा नहीं है।

प्रश्न २२ - ज्ञानावरण कर्म का बन्ध कैसे होता है ?

उत्तर - ज्ञानावरण का बन्ध; ज्ञान प्राप्ति करने वालों की पढ़ाई आदि में विघ्न डालने से होता है। जैसे - कोई पढ़ रहा है; उसकी पुस्तक छीन लेना, चुरा लेना, फाड़ देना। पढ़ते हुए की बिजली आदि बुझा देना। मुनिराज स्वाध्याय कर रहे हैं वहाँ जाकर जोर-जोर से बातें करना। प्रवचन में बातें करना। अपने अज्ञान को ज्ञानरूप प्रदर्शन करने की भावना रखना। अपने ज्ञान को ईर्ष्या से किसी को बताना नहीं। गुरु का नाम छिपा लेना आदि।

प्रश्न २३ - दर्शनावरण कर्म का बन्ध कैसे होता है ?

उत्तर - दर्शनादि में विघ्न डालने एवं दिन में सोने से दर्शनावरणी कर्म का बन्ध होता है।

प्रश्न २४ - वेदनीय कर्म का बन्ध कैसे होता है ?

उत्तर - दुख, शोक, ताप, आक्रन्दन आदि क्रियाओं से असाता वेदनीय एवं अरहन्त भगवान की पूजा में तत्परता रखना अर्थात् प्रमाद नहीं करना एवं बाल-वृद्ध तपस्वियों की वैय्यावृत्ति करना, दया, दान, संयम आदि से साता वेदनीय कर्म का बन्ध होता है।

प्रश्न २५ - मोहनीय कर्म का बन्ध कैसे होता है ?

उत्तर - अतत्त्व श्रद्धान एवं तीव्र कषाय करने से मोहनीय कर्म का बन्ध होता है।

प्रश्न २६ - चारों आयु कर्म का बन्ध किन कारणों से होता है ?

उत्तर - (अ) अति आरम्भ, अति परिग्रह से नरकायु का बन्ध होता है ।
(ब) मायाचार से तिर्यञ्चायु का बन्ध होता है ।
(स) अल्प-आरम्भ और अल्प-परिग्रह से मनुष्यायु का बन्ध होता है।
(द) सरल परिणाम, नम्रता, स्वभाव की निर्मलता, सराग संयम, देश संयम, बालतप आदि से देवायु का बन्ध होता है ।

प्रश्न २७ - नाम कर्म का बन्ध कैसे होता है ?

उत्तर - मन, वचन, काय की कुटिलता से अशुभ नामकर्म का बन्ध होता है और इससे विपरीत मन, वचन, काय की सरलता से शुभ नामकर्म का बन्ध होता है ।

प्रश्न २८ - अवनि बहुत अच्छा गाती है; पर अभि की आवाज बिल्कुल अच्छी नहीं है, क्यों ?

उत्तर - यह स्वर नामकर्म का फल है । अवनि का सुस्वर नामकर्म का उदय है, इसलिए उसकी आवाज अच्छी है; पर अभि का दुस्वर नामकर्म का उदय है, इसलिए उसकी आवाज अच्छी नहीं है ।

प्रश्न २९ - आरण सबको अच्छा लगता है, पर अन्वय को कोई देखता भी नहीं, क्यों ?

उत्तर - आरण का सुभग नामकर्म का उदय है और अन्वय का दुर्भग नामकर्म का उदय है, इसलिये ऐसा होता है ।

प्रश्न ३० - घर में अनुत्तर कुछ नहीं करता; फिर भी उसका यश गाते हैं और अनुदिश सबका भला करता है, कितना ही परोपकार करे, पर सब उसकी निंदा ही करते हैं क्यों ?

उत्तर - अनुत्तर की यशकीर्ति नामकर्म का उदय है और अनुदिश को अयशकीर्ति नामकर्म का उदय है, इसी कारण प्रशंसा और निंदा हो रही है ।

प्रश्न ३१ - गोत्र कर्म का बन्ध किन कारणों से होता है ?

उत्तर - दूसरे की निन्दा और अपनी प्रशंसा करने से नीच गोत्र का बन्ध

होता है । अपने दुर्गणों को प्रकट करना एवं दूसरों के गुणों को प्रकट करने से उच्च गोत्र कर्म का बन्ध होता है ।

प्रश्न ३२ - अन्तराय कर्म का बन्ध किन कारणों से होता है ?

उत्तर - दूसरों को दान, लाभ, भोग, उपयोग, वीर्य, ज्ञान, सुखादि में विघ्न करने से अन्तराय कर्म का बन्ध होता है ।

प्रश्न ३३ - क्या कर्मों से छूटने का कोई उपाय है ?

उत्तर - हाँ; कर्मों से छूटने का भी उपाय है । जिन भावों से कर्म बाँधते हैं, उनको नहीं करना एवं जिनेन्द्र देव जी की आज्ञानुसार तप करने से कर्मों से छूटा जा सकता है ।

प्रश्न ३४ - क्या हम भी कर्म से छूट सकते हैं कब ?

उत्तर - जी हाँ; हम भी कर्मों से छूट सकते हैं, पर जब दिगम्बर मुनि बनकर शुभाशुभ भावों का त्याग कर शुक्लध्यान में लीन होवेंगे तब ।

३. भावना

प्रश्न १ - भावना किसे कहते हैं; ये कितनी होती हैं ?

उत्तर - बार - बार चिन्तन-मनन करने का नाम भावना है, इनका दूसरा नाम अनुप्रेक्षा भी है । यह १२ होती हैं, १६ होती हैं, ४ होती हैं तथा मेरी भावना, वैराग्य भावना आदि कई प्रकार की होती हैं ।

प्रश्न २ - बाहर भावनाओं के नाम किस प्रकार हैं ?

उत्तर - १. अनित्य; २. अशरण; ३. संसार; ४. एकत्व; ५. अन्यत्व; ६. अशुचि; ७. आस्रव; ८. संवर; ९. निर्जरा; १०. लोक; ११. बोधिदुर्लभ; १२. धर्म भावना ।

प्रश्न ३ - अनित्य भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - **छन्द - राजा राणा क्षत्रपति, हाथिन के असवार ।**
मरना सबको एक दिन, अपनी - अपनी बार ॥

अर्थ - राजा, राणा, छत्रपति, हाथियों पर बैठने वाले, सब एक दिन समाप्त होने वाले हैं। कोई भी मृत्यु से बचने वाला नहीं है, ऐसा चिन्तन करना अनित्य भावना है।

प्रश्न ४ - अशरण भावना कौन-सी है ?

उत्तर - छन्द - दलबल देवी देवता, मात - पिता परिवार।
मरती बिरिया जीव को, कोई न राखनहार ॥

अर्थ - इस संसार में जीव को कोई भी शरण नहीं है। मरते समय; माता - पिता, देवी - देवता, कोई भी बचाने वाला नहीं है, ऐसा चिन्तन करना अशरण भावना है।

प्रश्न ५ - संसार भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥

अर्थ - संसार में सभी जीव दुखी हैं, कोई पैसे से दुखी है, कोई इच्छा से दुखी है, कहीं भी सुख नहीं है। ऐसा चिन्तन करना संसार भावना है।

प्रश्न ६ - एकत्व भावना कैसी है ?

उत्तर - छन्द - आप अकेला अवतरै, मरे अकेला होय,।
यूँ कबहूँ इस जीव को, साथी सगा न कोय ॥

अर्थ - इस संसार में जीव अकेला ही जन्म लेता है, अकेला ही मरता है, कोई भी उसका साथी नहीं है। ऐसा चिन्तन करना एकत्व भावना है।

प्रश्न ७ - अन्यत्व भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर सम्पति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय ॥

अर्थ - संसार में कोई भी अपना नहीं है, यह शरीर भी अपना नहीं है, तो घर-धन आदि कैसे अपने हो सकते हैं ? ऐसा चिन्तन करना अन्यत्व भावना है।

प्रश्न ८ - अशुचि भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - दिपे चाम - चादर मढ़ी, हाड़ पींजरा देह ।
भीतर या सम जगत में, अवर नहीं घिन - गेह ॥

अर्थ - यह शरीर हाड़ - माँस से बना हुआ है, इसके समान कोई घृणित पदार्थ संसार में कोई दूसरा नहीं है । ऐसा चिन्तन करना अशुचि भावना है ।

प्रश्न ९ - आस्रव भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - मोह नींद के जोर, जगवासी घूमैं सदा ।
कर्म चोर चहुँ ओर, सरवस लूटें सुध नहीं ॥

अर्थ - मोह से युक्त होकर जीव; संसार में घूमता है और कर्मरूपी चोर इसे लूट लेते हैं । ऐसा चिन्तन करना आस्रव भावना है ।

प्रश्न १० - संवर भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - सतगुरू देय जगाय, मोहनींद जब उपशमें ।
तब कुछ बनैं उपाय, कर्म - चोर आवत रुकैं ॥

अर्थ - मोह; मन्द होता है, तब गुरु के उपदेश से कुछ उपाय करने पर, कर्म चोरों का आना रुक जाता है । ऐसा चिन्तन करना संवर भावना है ।

प्रश्न ११ - निर्जरा भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - ज्ञान - दीप - तप तेल भर, घर शोधैं भ्रमछोर ।
या विध बिन निकसैं नहीं, पैठे पूरब चोर ॥
पञ्च महाव्रत सञ्चरण, समिति पञ्च परकार ।
प्रबल पञ्च इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार ॥

अर्थ - ज्ञान और चरित्र को धारण करने से कर्म की निर्जरा होती है अर्थात् ज्ञानरूपी दीपक में तपस्यारूपी तेल भरकर सभी प्रकार के भ्रमों को तिलाञ्जलि देकर, स्व -स्वरूप घर का शोध करके, महाव्रतादि के बल से कर्मों को खिपाना ही निर्जरा है । ऐसा चिन्तन करना निर्जरा भावना है ।

प्रश्न १२ - लोक भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - चौदह राजू उतंग नभ, लोक पुरुष - संठान ।
तामें जीव अनादितैं, भरमत है बिन ज्ञान ।।

अर्थ - १४ राजू ऊँचा लोक है, इसमें जीव; ज्ञान के बिना अनादिकाल से भ्रमण कर रहा है । ऐसा चिन्तन करना लोक भावना है ।

प्रश्न १३ - बोधि दुर्लभ भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - धन-कन कंचन राज सुख , सबहि सुलभकर जान ।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान ।।

अर्थ - संसार में धन, सम्पत्ति, स्त्री, राज्य सबका मिलना सरल है पर; आत्मज्ञान-सच्चा ज्ञान मिलना कठिन है । ऐसा चिन्तन करना बोधि दुर्लभ भावना है ।

प्रश्न १४ - धर्म भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - छन्द - जाँचें सुर-तरु देय सुख, चिन्तित चिन्ता रैन ।
बिना जाँचें बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन ।।

अर्थ - कल्पवृक्ष तो माँगने पर चीज देता है, चिन्तामणि रत्न; चिन्तन करने पर फल देता है, लेकिन धर्म; बिना माँगे ही सब सुख देता है । ऐसा चिन्तन करना धर्म भावना है ।

प्रश्न १५ - संसार से छुड़ाने वाली और कौन-सी भावनायें हैं ?

उत्तर - संसार से छुड़ाने वाली सोलह कारण भावनायें हैं और मैत्री, प्रमोद, कारुण्य, मध्यस्थ; ये ४ भावनायें भी हैं ।

प्रश्न १६ - आत्मचिंतन की भावना कैसे करना चाहिए; उसका क्या लाभ है ?

उत्तर - मैं भी पञ्चपरमेष्ठी के समान हूँ । मुझ में और सिद्ध में द्रव्य से भेद नहीं है, पर्याय का भेद है । वे भेद कब मिटें और मैं भी साक्षात् सिद्ध बन जाऊँ, ऐसी भावना को प्रतिदिन चिन्तन करने वाला जीव; स्वयं भी सिद्ध भगवान बन जाता है ।

प्रश्न १७ - सोलह कारण भावनाओं के नाम बताइये ?

उत्तर - १. दर्शन विशुद्धि; २. विनय सम्पन्नता; ३. शीलव्रत अनतिचार; ४.अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग; ५.संवेग; ६.शक्तितस्त्याग; ७.शक्तितस्तप; ८.साधु समाधि; ९.वैय्यावृत्ति; १०.अर्हद्‌भक्ति; ११.आचार्य भक्ति; १२. बहुश्रुत भक्ति; १३.प्रवचन भक्ति; १४.आवश्यकअपरिहाणी; १५.मार्ग प्रभावना; १६.प्रवचन वात्सल्य; ये १६ कारण भावनायें हैं।

प्रश्न १८ - सोलह कारण भावनाओं का फल बताइये ?

उत्तर -

दरश विशुद्धि धरै जो कोई, ताको आवागमन न होई ।
विनय महा धारै जो प्राणी, शिव वनिता की सखी बखानी ।।१।।
शील सदा दृढ़ जो नर पाले, सो औरन की आपद टाले ।
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं, ताके मोह महातम नाहीं ।।२।।
जो संवेग भाव विस्तारे, सुरग मुकतिपद आप निहारे ।
दान देय मन हरष विशेखै, इह भव जस परभव सुख देखै ।।३।।
जो तप तपै खपै अभिलाषा, चूरै करम शिखर गुरुभाषा ।
साधुसमाधि सदा मनलावैं, तिहैं जग भोग भोगि शिव जावैं ।।४।।
निशदिन वैयावृत्य करैया, सो निश्चै भवनीर तिरैया ।
जो अरहन्त भगति मनआनैं, सो जन विषय-कषाय न जानैं।।५।।
जो आचारज भगति करैं है, सो निर्मल आचार धरैं है ।
बहुश्रुतवन्त भगति जो करई, सो नर सम्पूरन श्रुत धरई ।।६।।
प्रवचन भगति करैं जो ज्ञाता, लहैं ज्ञान परमानन्द दाता ।
षट् आवश्यक काल जो साधैं, सो ही रत्नत्रय आराधैं ।।७।।
धरम प्रभाव करैं जैं ज्ञानी, तिन शिवमारग रीति पिछानी ।
वत्सल अङ्ग सदा जो ध्यावैं, सो तीर्थङ्कर पदवी पावैं ।।८।।
येहि सोलह भावना, सहित धरैं व्रत जोय ।
देव इन्द्र नरवंद्यपद, ''द्यानत'' शिव पद होय ।।

जो इन सोलह भावनाओं को केवली, श्रुत केवली के पादमूल में भाता

है, वह देव-इन्द्रों के द्वारा वन्दनीय तीर्थङ्कर पद प्राप्त करके मुक्ति पाता है ।

प्रश्न १९ - मेरी भावना कौन-सी है ?

उत्तर -

जिसने रागद्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया ,
सब जीवों को मोक्ष-मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ।
बुद्ध - वीर - जिन - हरि - हर-ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो ,
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ।।१।।

विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्यभाव धन रखते हैं,
निज-पर के हित साधन में जो, निश-दिन तत्पर रहते हैं ।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी-साधु जगत के दुःख, समूह को हरते हैं ।।२।।

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे,
उन्हीं जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ।
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूँ,
परधन-वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ ।।३।।

अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ,
देख दूसरों की बढ़ती पर, कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य व्यवहार करूँ,
बने जहाँ तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूँ ।।४।।

मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे,
दीन दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे ।

दुर्जन-क्रूर कुमार्ग-रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे,
सम्यभाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥५॥

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे,
बनें जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे ।
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥६॥

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों वर्षों तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आ जावे ।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ॥७॥

होकर सुख में मग्न न फूलैं, दुख में कभी न घबरावैं,
पर्वत - नदी, श्मशान - भयानक, अटवी से नहीं भय खावैं ।
रहे अडोल अकम्प निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे,
इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे ॥८॥

सुखी रहैं सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावैं,
बैर - पाप - अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावैं ।
घर - घर चरचा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे,
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावे ॥९॥

ईति - भीति व्यापै नहिं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करे ।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे,
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्व हित किया करे ॥१०॥

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे ।
बनकर सब "युगवीर" हृदय से, देशोन्नति-रत रहा करें,
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुख संकट सहा करें ॥१२॥

प्रश्न २० - मेरी भावना में किसका वर्णन है ?

उत्तर - मेरी भावना में; सच्चे देव, गुरु और धर्म का वर्णन है प्रथम छन्द में सच्चे देव (अरहंत) का स्वरूप है । द्वितीय छन्द में सच्चे गुरु का स्वरूप है एवं शेष छन्दों में सच्चे धर्म का स्वरूप है ।

देव-स्तुति

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रस लीन ।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि-रज-रहस विहीन ॥१॥

जय वीतराग विज्ञान पूर, जय मोह तिमिर को हरन सूर ।
जय ज्ञान अनन्तानन्त धार, दृग सुख वीरज मण्डित अपार ॥२॥

जय परम शान्ति मुद्रा समेत, भवि-जन को निज अनुभूति हेत ।
भवि भागन वश जोगे वशाय, तुम ध्वनि व्है सुनि विभ्रम नशाय ॥३॥

तुम गुण चिन्तत निज -पर विवेक, प्रगटे विघटे आपद अनेक ।
तुम जगभूषण दूषण विमुक्त, सब महिमा युक्त विकल्प मुक्त ॥४॥

अविरुद्ध शुद्ध चेतन सरूप, परमात्म परम पावन अनूप ।
शुभ-अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परिणतिमय अक्षीण ॥५॥

अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्व चतुष्टय में राजत गम्भीर ।
मुनि गणधरादि सेवत महन्त, नव केवल लब्धि रमा धरन्त ॥६॥

तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जेहैं सदीव ।
भवसागर में दुख-क्षार वारि, तारण को और न आप टारि ॥७॥

यह लख निज दुख-गद हरण काज, तुम ही निमित्त कारण इलाज।
जाने तातैं मैं शरण आय, उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥८॥

मैं भ्रमों अपनपों विसर आप, अपनाये विधि फल पुण्य-पाप ।
निज को पर को कर्ता पिछान, पर में अनिष्टता इष्ट ठान ॥९॥

आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ।
तन परिणति में आपों चितार, कबहुँ न अनुभवो स्वपद सार ॥१०॥

तुमको जाने बिन जो कलेश, पायो सो तुम जानत जिनेश ।
पशु नरक-नर-सुरगत मँझार, भव धर-धर मर्‍यो अनन्त वार ॥११॥

अब काल लब्धि बल तैं दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ।
मनशान्ति भयो मिट सकलद्वन्द, चाखो स्वातम इम दुख-निकन्द॥१२॥

तातैं ऐसी अब करो नाथ, बिछुड़े न कभी तुम चरण साथ ।
तुम गुणगण को नहिं छेव देव, जग तारण को तुम विरद एव ॥१३॥

आतम के अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय ।
मैं रहूँ आप में आप लीन, सो करों होऊँ जो निजाधीन ॥१४॥

मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश ।
मुझ कारज के कारण सुआप, शिव करो, हरो मम मोह ताप ॥१५॥

शशि शान्ति करण तप हरण हेत ! स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ।
पीवत पीयूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभवतैं भव नशाय ॥१६॥

त्रिभुवन तिहुँ काल मँझार कोय, नहीं तुम बिन जिन सुखदाय होय ।
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुख जलधि उबारन तुम जहाज ॥१७॥

दोहा

तुम गुणगण मणि गणपति, गणत न पावहिं पार ।
''दौल'' स्वल्पमति किम कहें, नमों त्रियोग सम्हार ॥

४ - मिथ्यात्व - शत्रु

प्रश्न १ - मिथ्यात्व किसे कहते हैं और उसके कितने भेद होते हैं ?

उत्तर- वस्तु तत्त्व की विपरीत मान्यता को मिथ्यात्व कहते हैं और उसके मूल में दो भेद होते हैं - १. अगृहीत मिथ्यात्व; २. गृहीत मिथ्यात्व ।

प्रश्न २ - अगृहीत एवं गृहीत मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर - १. अनादि काल से प्रचलित तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता को अगृहीत मिथ्यात्व कहते हैं । जैसे - जीव को शरीर और शरीर को जीव मानना ।

२. खोटे देव - शास्त्र - गुरुओं की शिक्षा से जो मिथ्यात्व ग्रहण किया जाता है, उसे गृहीत मिथ्यात्व कहते हैं । जैसे - हिंसात्मक क्रियाओं में धर्म मानना । यह पाँच प्रकार का हैं ।

१. विपरीत मिथ्यात्व; २. एकान्त मिथ्यात्व; ३. विनय मिथ्यात्व;

४. संशय मिथ्यात्व; ५. अज्ञान मिथ्यात्व ।

प्रश्न ३ - मिथ्यात्व के भेदों की परिभाषा किस प्रकार है ?

उत्तर - विपरीत मिथ्यात्व - वस्तु तत्त्व जैसा है वैसा न ग्रहण कर, अन्य रूप ग्रहण करने को विपरीत मिथ्यात्व कहते हैं । जैसे - हिंसादि पापों में धर्म मानना ।

एकान्त मिथ्यात्व - सापेक्ष वस्तु-स्वरूप को किसी भी एक नय से ग्रहण करने को एकान्त मिथ्यात्व कहते हैं । जैसे - आत्मा शुद्ध ही है या मात्र सम्यदर्शन से ही मोक्ष होता है ।

विनय मिथ्यात्व - सम्यक् एवं मिथ्या की पहचान बिना; सभी प्रकार के देव - शास्त्र -गुरुओं की समान विनय करने को वैनयिक मिथ्यात्व कहते हैं । जैसे - पुण्य की प्राप्ति तो होगी ही यह मानकर हर किसी के चरणों में माथा टेकना ।

संशय मिथ्यात्व - वस्तु तत्त्व जैसा भगवान ने बताया है; वैसा है या नहीं, इस प्रकार के संकल्प को संशय मिथ्यात्व कहते हैं ।

अज्ञान मिथ्यात्व - वस्तु तत्त्व को जानने से कोई लाभ नहीं है, ऐसी मान्यता को अज्ञान मिथ्यात्व कहते हैं । जैसे - किसी वस्तु का ज्ञान होने पर आकुलता बढ़ती है, अत: हम अज्ञानी ही ठीक हैं ।

प्रश्न ४ - मिथ्यादृष्टि जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो रूढ़ि एवं मिथ्या क्रियाकलापों को ही सम्यक् मानता है, उसे मिथ्यादृष्टि जीव कहते हैं ।

प्रश्न ५ - सात तत्त्वों के प्रति मिथ्यादृष्टि जीव की मान्यता किस प्रकार है ?

उत्तर - मिथ्यादृष्टि; तत्त्वों के हेयोपादेय को न समझते हुए, कपोल - कल्पित या लोक रूढ़ित विपरीत मानता है ।

१.जीव तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता - जीव को शरीररूप मानना एवं जन्म - मरण करने वाला मानना यह जीव के प्रति विपरीत मान्यता है ।

२.अजीव तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता - शरीर को जीव के रूप में शाश्वत सुखमय मानना, यह अजीव तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता है ।

३.आस्रव तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता - राग, द्वेष, मोह एवं योग की चंचलता को उपादेय मानना, यह आस्रव तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता है ।

४.बन्ध तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता - शुभ-अशुभ, कर्म बन्ध में इष्टानिष्ट की कल्पना करना; बन्ध तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता है ।

५.संवर तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता - आत्मोत्कर्ष हेतु वैराग्यमय - सम्यग्ज्ञान एवं संयम को दुखद मानना; संवर तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता है ।

६.निर्जरा तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता - कषायों का शमन; इन्द्रियों का दमन न कर, साम्य परिणति से कर्मों को इन्द्रियों का दमन न कर, साम्य परिणति से कर्मों को निर्जरित न करना; निर्जरा तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता है ।

७.मोक्ष तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता - कर्मों की परिसमाप्ति के बिना ही अपने आपको शाश्वत सुखी बनाने की कल्पना करना; मोक्ष तत्त्व के प्रति विपरीत मान्यता है ।

५. रत्नत्रय - बन्धु

१.सम्यग्दर्शन

प्रश्न १ - सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं, भेद सहित बताओ ?

उत्तर -१. अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, मिथ्यात्व, सम्यक्

मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति; इन ७ प्रकृतियों के उपशम, क्षय, क्षयोपशम से होने वाली जो विशुद्धि है, उसे सम्यग्दर्शन कहते हैं अथवा अनन्तानुबन्धी ४ और एक मिथ्यात्व; इन पाँच प्रकृतियों के उपशम, क्षय, क्षयोपशम से होने वाली विशुद्धि को सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

२. वस्तु के यथार्थ श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

३. सात तत्त्व और ९ पदार्थ के यथार्थ श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

४. सच्चे देव, शास्त्र, गुरु के श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

५. पर-द्रव्यों से भिन्न; अपनी आत्मा की रूचि सम्यग्दर्शन है ।

६. प्रशम, संवेग, अनुकम्पा, आस्तिक्य लक्षणयुक्त सम्यदर्शन है ।

७. अनन्तानुबन्धी कषाय एवं मिथ्यात्व के अभाव में करणलब्धि के अनन्तर सप्त तत्त्व के प्रति यथार्थ श्रद्धा का होना सम्यग्दर्शन है । यह सम्यग्दर्शन अष्ट अंग सहित एवं २५ दोष रहित होता है ।

सम्यग्दर्शन के भेद - सम्यग्दर्शन के उपशम, क्षयोपशम एवं क्षायिक की अपेक्षा तीन भेद हैं । निसर्गज एवं अधिगमज की अपेक्षा दो भेद हैं। सराग एवं वीतराग की अपेक्षा दो भेद तथा निश्चय एवं व्यवहार की अपेक्षा भी दो भेद हैं ।

प्रश्न २ - सम्यग्दर्शन के भेदों की व्याख्या किस प्रकार है ?

उत्तर - १. निसर्गज सम्यग्दर्शनः - सच्चे देव - शास्त्र - गुरुओं के साक्षात् समागम के बिना; जो सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है, उसे निसर्गज सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

२. अधिगमज सम्यग्दर्शनः - सच्चे गुरु आदि का उपदेश सुनकर; जो सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है, उसे अधिगमज सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

३. उपशम सम्यग्दर्शनः - अनन्तानुबन्धी कषाय चौकड़ी एवं मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व तथा सम्यक् प्रकृति के उपशम से होने वाले सम्यग्दर्शन को उपशम सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

४. क्षयोपशम सम्यग्दर्शनः - सर्वघाती प्रकृतियों का उदयाभावी क्षय,

आगामी काल में उन्हीं का सदवस्था रूप उपशम और देशघाति सम्यक् प्रकृति के उदय से होने वाले सम्यग्दर्शन को क्षयोपशम सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

५.क्षायिक सम्यग्दर्शन:- मिथ्यात्व आदि सातों प्रकृतियों के क्षय से होने वाले सम्यग्दर्शन को क्षायिक सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

६.सराग सम्यग्दर्शन:- राग सहित प्रशम, संवेग, अनुकम्पा, आस्तिक्य आदि गुणों की अपेक्षा से सम्यग्दर्शन को सराग सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

७.वीतराग सम्यग्दर्शन:- राग रहित; आत्म विशुद्धि की अपेक्षा से सम्यग्दर्शन को वीतराग सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

८.निश्चय सम्यग्दर्शन:- पर-पदार्थों से भिन्न; आत्मस्वरूप में रूचि होने को निश्चय सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

९.व्यवहार सम्यग्दर्शन:- सच्चे देव, शास्त्र, गुरु, तत्त्व, पदार्थ, धर्म आदि के साथ; निजात्म स्वरूप के श्रद्धान को व्यवहार सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

प्रश्न ३ - सम्यग्दर्शन की क्या महिमा है ?

उत्तर - १.सम्यग्दर्शन का मोक्षमार्ग में महत्त्वपूर्ण स्थान है, इसके अभाव में ज्ञान एवं चारित्र कार्यकारी नहीं हैं ।

२.एक बार सम्यग्दर्शन होने के अनन्तर जीव; अर्द्ध पुद्गल परावर्तन से अधिक काल तक संसार में परिभ्रमण नहीं कर सकता ।

३.सम्यग्दर्शन होने पर कर्मों का बन्ध अन्तःकोटाकोटि सागर से अधिक नहीं होता ।

४.सम्यग्दर्शन के प्रभाव से, पतित आत्मा भी पावनता को प्राप्त कर, देवेन्द्रों द्वारा प्रशंसनीय बन जाती है ।

५.सम्यग्दर्शन के रहते हुए यह जीव विकलत्रय, स्त्री, नपुंसक, भवनत्रिक तथा प्रथम नरक को छोड़कर शेष छह नरकों में उत्पन्न नहीं होता ।

६.सम्यग्दृष्टि दरिद्री, हीन कुल, हीन-पर्याय एवं हीन स्थान में उत्पन्न नहीं होता ।

७. भवोदधि तारक तीर्थङ्कर जैसी परम पुण्य प्रकृति का शुभारम्भ सम्यग्दर्शन के साथ होता है ।

प्रश्न ४ - सम्यग्दर्शन के अष्ट अंगों के नाम एवं उनका स्वरूप किस प्रकार है ?

उत्तर - १. निशंकित; २. निकांक्षित; ३.निर्विचिकित्सा; ४.अमूढ़दृष्टि; ५. उपगूहन; ६. स्थितिकरण; ७. वात्सल्य; ८. प्रभावना ।

१.निशंकित अंगः - जिनेन्द्र प्रभु एवं सच्चे गुरु की वाणी में किसी भी प्रकार की आशंका न करने को निशंकित अंग कहते हैं । इस अंग में अंजन चोर प्रसिद्ध हुआ ।

२.निकांक्षित अंगः - उभय लोक में धर्म के माध्यम से इन्द्रिय जन्य सुखों की आकांक्षा नहीं करने को निकांक्षित अंग कहते हैं । इस अंग में अनन्तमती का नाम गौरवान्वित है ।

३.निर्विचिकित्सा अंगः - धर्मायतन एवं व्यवहारिकता में दिगम्बर गुरु आदि में मलिनता देख कर; ग्लानि न करने को निर्विचिकित्सा अंग कहते हैं । इस अंग में उद्यायन राजा प्रसिद्ध हुए हैं ।

४. अमूढ़ दृष्टि अंगः -लोकेषणा या किसी भी प्रकार के मिथ्या-चमत्कारों में न बहने को अमूढ़ दृष्टि अंग कहते हैं । इस अंग में रेवती रानी प्रसिद्ध हुई हैं ।

५.उपगूहन अंगः - मोक्षमार्ग में अग्रसर धर्मात्माओं में यदि किंचित् दोष दृष्टिगत होते हैं, उनकी चर्चा अन्यत्र नहीं करने को उपगूहन अंग कहते हैं । इस अंग में जिनेन्द्र भक्त सेठ प्रसिद्ध हुए हैं ।

६.स्थितिकरण अंगः -किसी कारण विशेष से; कषाय के आवेग में आकर, निज व पर का मन यदि मोक्षमार्ग से विचलित हो तो; उसे धर्म मार्ग पर स्थित करने को स्थितिकरण अंग कहते हैं । इस अंग में वारिषेण मुनिराज प्रसिद्ध हुए हैं ।

७.वात्सल्य अंगः - साधर्मी एवं सामान्य जीवों के प्रति गोवत्स सम प्रीति को वात्सल्य अंग कहते हैं। इस अंग में विष्णुकुमार मुनि प्रसिद्ध हुए।

८.प्रभावना अंगः - रत्नत्रय जाग्रति के साथ दान, पूजा, ज्ञान, रथ आदि के माध्यम से सनातन धर्म के प्रति लोगों को आकर्षित करने को प्रभावना अंग कहते हैं। इस अंग में वज्रकुमार मुनि प्रसिद्ध हुए हैं।

प्रश्न ५ - सम्यग्दर्शन के बाधक २५ दोषों के नाम और उनका स्वरूप किस प्रकार है?

उत्तर - आठ शंकादि दोष -

१. शंका; २. कांक्षा; ३. विचिकित्सा; ४. मूढ़ दृष्टि; ५. अनुपगूहन; ६. अस्थितीकरण; ७. अवात्सल्य; ८. अप्रभावना;

आठ मद -

१. ज्ञान मद; २. पूजा मद; ३. कुल मद; ४. जाति मद; ५. बल मद; ६. ऋद्धि मद; ७. तप मद; ८. रूप मद;

छह अनायतन -

१. मिथ्या देव; २. मिथ्या शास्त्र या धर्म; ३. मिथ्या गुरु; ४. मिथ्या देव उपासक; ५. मिथ्या शास्त्र उपासक; ६. मिथ्या गुरु उपासक।

तीन मूढ़ता -

१. देव मूढ़ता; २. गुरु मूढ़ता; ३. लोक मूढ़ता।

२५ दोषों का स्वरूप -

आठ शंकादि दोषः-निशंकित आदि आठ अंगों से विपरीत शंकादि आठ दोष होते हैं -

१. शंकाः - सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की वाणी में शंका करना।

२. कांक्षाः - धर्म को धारण करके; उभय लोक में इन्द्रिय सुखों की इच्छा करना।

पुष्पश्रमण मुनि

३. विचिकित्सा: - धर्मायतन एवं दिगम्बर रूप में मलिनता देखकर ग्लानि करना।

४. मूढ़ दृष्टि: - धर्म विरूद्ध किसी भी चमत्कार या बहाव में बह जाना।

५. अनुपगूहन: - सज्ज्ञन पुरुषों में होने वाले लघु दोषों की भी निन्दा करना।

६. अस्थितीकरण: - धर्म मार्ग एवं सत् कर्तव्य से विचलित होते हुए, जीवों को स्थिर नहीं करना।

७. अवात्सल्य: - सामाजिक एवं धार्मिक व्यक्तियों में अनुराग नहीं रखना।

८. अप्रभावना: - स्वयं में सामर्थ्य होने पर भी दान - पूजादि विशेष कार्यों के माध्यम से धर्म प्रभावना नहीं करना।

आठ मद: - आत्म स्वरूप को भूलकर; ख्याति-लाभ के चक्कर में फंस कर, नश्वर वस्तुओं को माध्यम से अहंकार की जाग्रति को मद कहते हैं।

१. ज्ञान मद: - ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से कुछ ज्ञान प्राप्त होने पर, मेरे समान कौन ज्ञानी है ? ऐसा अभिमान करने को ज्ञानमद कहते हैं।

२. पूजा मद: - यह नाम कर्म के उदय से समाज द्वारा प्रतिष्ठा एवं सम्मान प्राप्त होने पर, मेरे समान कौन प्रतिष्ठित है ? ऐसा अभिमान करने को पूजा मद कहते हैं।

३. कुल मद: - उच्च गोत्र कर्म के उदय से क्षत्रिय, ब्राह्मण एवं वैश्य वर्ण के विशेष प्रतिष्ठित कुलों में उत्पन्न होने पर, मेरे समान कौन कुलीन है ? ऐसा अभिमान करने को कुल मद कहते हैं।

४. जाति मद: - पुण्य कर्म के उदय से मामा, नाना आदि के राज्य आदि प्रतिष्ठित पदों पर आसीन होने पर, उसका अभिमान करने को जाति मद कहते हैं।

५.बल मदः - वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त विशेष शक्ति का अभिमान करने को बल मद कहते हैं ।

६.ऋद्धि मदः - शुभ कर्मोदय से प्राप्त बुद्धि, बल, तप, विक्रिया, रस तथा अक्षीण ऋद्धियों के अभिमान करने को ऋद्धि मद कहते हैं ।

७.तप मदः - चारित्र मोहनीय कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त तपस्या विशेष की शक्ति का अभिमान को; तप मद कहते हैं ।

८.रूप मदः - शुभ नाम कर्म के योग से प्राप्त सुन्दर एवं सुडौल शरीर के प्राप्त होने पर उसका अभिमान करने को रूप मद कहते हैं ।

छह अनायतन - अधर्म के स्थानों को अनायतन कहते हैं ।

१.मिथ्या देव भक्ति : - रागी - द्वेषी के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति को मिथ्यादेव भक्ति कहते हैं ।

२.मिथ्या गुरु भक्ति : - उपल (पत्थर) नाववत् संसार समुद्र में डुबोने वाले पाखण्डी गुरुओं की स्तुति करने को मिथ्या गुरु भक्ति कहते हैं ।

३.मिथ्या धर्म भक्ति : - सत्य - अहिंसा से रहित; चतुर्गति भ्रमण के हेतु भूतधर्म में आस्था रखने को मिथ्या धर्म भक्ति को अनायतन कहते हैं ।

इन तीनों के उपासकों की प्रशंसा करने वालों को क्रमशः-

४.मिथ्या देव उपासक अनायतन; ५.मिथ्या गुरु उपासक अनायतन; ६.मिथ्या धर्म उपासक अनायतन कहते हैं ।

तीन मूढ़ता - आगम के परिप्रेक्ष्य में विवेक शून्य होकर मनमानी करने को मूढ़ता कहते हैं ।

१.लोक मूढ़ताः-लोक प्रचलित रूढ़ियों में धर्म बुद्धि से आसक्त होने को लोक मूढ़ता कहते हैं ।

२.देव मूढ़ताः - रागी - द्वेषी, कपोल-कल्पित देवों में देवत्व मानने को मूढ़ता कहते हैं ।

३. गुरु मूढ़ताः - विषयासक्त, आरम्भ-परिग्रह युक्त, पाप कर्म पथ प्रदर्शक गुरुओं में गुरुत्व मानने को गुरु मूढ़ता कहते हैं ।

प्रश्न ६ - लब्धियों का स्वरूप एवं भेद किस प्रकार है ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन के अनुरूप; निर्मल परिणामों के माध्यम से आत्मा में होने वाली विशुद्धि को लब्धि कहते हैं । इसके पाँच भेद हैं, जिनमें से आदि की चार समान्यतया भव्य एवं अभव्य सभी जीवों के हो सकती हैं, किन्तु अन्तिम करण लब्धि; भव्य जीवों के ही सम्भव है। लब्धि के पाँच भेद एवं स्वरूप -

१. क्षयोपशम लब्धि; २. विशुद्धि लब्धि; ३. देशना लब्धि; ४. प्रायोग्य लब्धि; ५. करण लब्धि ।

१. क्षयोपशम लब्धिः - अशुभ कर्मों की निर्जरा के योग्य; विशुद्ध परिणामों की प्राप्ति होने को क्षयोपशम लब्धि कहते हैं ।

२. विशुद्धि लब्धिः - शुभ कर्मों के बंध में कारण भूत; विशुद्ध परिणामों की प्राप्ति होने को विशुद्धि लब्धि कहते हैं ।

३. देशना लब्धिः - आचार्य आदि के उपदेश को सुनकर; अवधारण करने की योग्यता के प्राप्त होने को देशना लब्धि कहते हैं ।

४. प्रायोग्य लब्धिः - पञ्चेन्द्रियादि स्वरूप योग्यता की प्राप्ति के साथ; आयु कर्म के बिना सात कर्मों की स्थिति, अन्तःकोटाकोटी सागर कर देने की योग्यता की प्राप्ति को प्रायोग्य लब्धि कहते हैं ।

५. करण लब्धिः - सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में सजग कारण; अधःकरण, अपूर्वकरण एवं अनिवृत्तिकरणरूप परिणामों की प्राप्ति होने को करण लब्धि कहते हैं ।

२. सम्यग्ज्ञान

प्रश्न १ - सम्यग्ज्ञान किसे कहते हैं और उसके कितने भेद हैं ?

उत्तर - वस्तु तत्त्व जिस रूप से अवस्थित है उसे; उसी रूप में जानने वाले ज्ञान को सम्यग्ज्ञान कहते हैं । इसके पाँच भेद हैं -
१. सुमतिज्ञान; २. सुश्रुतज्ञान; ३. अवधिज्ञान; ४. मनःपर्ययज्ञान; ५. केवलज्ञान

प्रश्न २ - सुमतिज्ञान किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं ?

उत्तर - पंचेन्द्रिय और मन के निमित्त से होने वाले पदार्थों के यथार्थ ज्ञान को सुमतिज्ञान कहते हैं । इसके अवग्रह आदि की अपेक्षा ४ तथा विषयभूत पदार्थों की अपेक्षा ३३६ भेद हैं ।

प्रश्न ३ - सुश्रुतज्ञान किसे कहते हैं, उसके कितने भेद हैं ?

उत्तर - सुमतिज्ञान से अवगत पदार्थों के विशेष परिज्ञान को सुश्रुतज्ञान कहते हैं । इसके मूल में दो भेद हैं - १. अंगबाह्य; २. अंग प्रविष्ट । इसमें से अंग प्रविष्ट के आचारांग आदि बारह भेद तथा अंग बाह्य के अनेक भेद हैं ।

प्रश्न ४ - सुअवधिज्ञान किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?

उत्तर - रूपी पदार्थ के यथार्थ स्वरूप को द्रव्य - क्षेत्र - काल - भाव की मर्यादा पूर्वक जानने वाले ज्ञान को सुअवधिज्ञान कहते हैं । इसके मूल में दो भेद हैं -१. भवप्रत्यय; २. गुणप्रत्यय ।

देव एवं नारकियों के अवधिज्ञान को भवप्रत्यय अवधिज्ञान कहते हैं तथा मनुष्य और तिर्यञ्चों के क्षयोपशम निमित्तक ज्ञान को गुणप्रत्यय अवधिज्ञान कहते हैं ।

गुणप्रत्यय अवधिज्ञान के छः भेद हैं -

१. अनुगामी - जो परभव में भी साथ रहे ।

२. अननुगामी - जो परभव में साथ न रहे ।

३. हीयमान - जो क्रमशः घटता जाए ।

४. वर्द्धमान - जो द्वितीया के चन्द्र के समान बढ़ता जाए ।

५. अवस्थित - जो हमेशा एक-सा रहे ।

६. अनवस्थित - जो घटता -बढ़ता जाए ।

देशावधि, परमावधि और सर्वावधि की अपेक्षा; अवधि ज्ञान के तीन भेद भी होते हैं ।

प्रश्न ५ - मनःपर्ययज्ञान किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?

उत्तर - द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा सहित, पर-मन में अवस्थित रूपी पदार्थ को विषय करने वाले ज्ञान को मनःपर्ययज्ञान कहते हैं । इसके दो भेद हैं - १. ऋजुमति; २. विपुलमति ।

ऋजुमतिः - जो वर्तमान की पर्याय को ग्रहण करे और होकर छूट भी सके, उसे ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान कहते हैं ।

विपुलमतिः - जो भूत, वर्तमान, भविष्य काल की चिंतित, अर्द्ध चिंतित, अचिंतित पर्याय को विषय करे और होकर छूटे नहीं, उसे विपुलमति मनःपर्ययज्ञान कहते हैं ।

प्रश्न ६ - केवलज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर - लोकालोकवर्ती समस्त द्रव्य एवं उनके गुण-पर्यायों को युगपत् जानने वाले ज्ञान को केवलज्ञान कहते हैं ।

प्रश्न ७ - सम्यग्ज्ञान से क्या लाभ हैं ?

उत्तर - सम्यग्ज्ञान प्रगट होते ही; सम्यक् चारित्र के प्रति स्वाभाविक रूप से आकर्षण हो जाता है एवं सम्यग्ज्ञानी के मन में व्यर्थ के विकल्प जन्म नहीं लेते । प्रतिकूल परिस्थितियों में वह भवितव्यता पर विश्वास करके कमलवत् प्रफुल्लित रहता है ।

प्रश्न ८ - सम्यग्ज्ञान के कितने अंग हैं ?

उत्तर - सम्यग्ज्ञान के आठ अंग हैं -

१. शब्दाचार; २. अर्थाचार; ३. उभयाचार; ४. कालाचार; ५. विनयाचार; ६. उपधानाचार; ७. बहुमानाचार; ८. अनिह्नवाचार ।

१. शब्दाचारः - व्याकरण नियमानुसार; शुद्ध उच्चारण करने को शब्दाचार कहते हैं ।

२. अर्थाचारः - यथार्थ शुद्ध अर्थ के ग्रहण करने को अर्थाचार कहते हैं ।

३.उभयाचारः - शब्द और अर्थ इन दोनों का शुद्ध पाठ करने को उभयाचार कहते हैं।

४.कालाचारः - अकाल वर्जित; आगम प्रणीत समयानुसार स्वाध्याय या पठन - पाठन करने को कालाचार कहते हैं।

५.विनयाचारः - योगत्रय की शुद्धि से; योग्य आसन में बैठकर; भक्ति एवं विनय के साथ पठन-पाठन करने को विनयाचार कहते हैं।

६.उपधानाचारः - धारणापूर्वक ज्ञानाराधन करने को उपधानाचार कहते हैं।

७.बहुमानाचारः-सम्यग्ज्ञान, सम्यक् शास्त्र एवं गुरुओं का पूर्ण रूप से समादर करने को बहुमानाचार कहते हैं।

अनिह्नवाचार - जिस गुरु से एवं जिस शास्त्र से ज्ञान प्राप्त किया हो, उसका नाम नहीं छिपाने को अनिन्हवाचार कहते हैं।

प्रश्न ९ -मिथ्याज्ञान किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं?

उत्तर - मिथ्यात्व से सहित, शास्त्र मर्यादा एवं ज्ञानांगों से रहित, वस्तु विपर्यय ज्ञान को मिथ्याज्ञान कहते हैं। इसके तीन भेद हैं -

१.कुमति ज्ञान; २.कुश्रुतज्ञान; ३.कुअवधिज्ञान।

१.कुमति ज्ञानः - मन और इन्द्रिय की सहायता से होने वाले वस्तु स्वरूप के विपरीत ज्ञान को कुमतिज्ञान कहते हैं।

२.कुश्रुतज्ञानः - जिनेन्द्र भगवान की वाणी से विरूद्ध कुमतिज्ञान से अवगत पदार्थों का जो विशेष ज्ञान होता है, उसे मिथ्या श्रुतज्ञान कहते हैं।

३.कुअवधिज्ञानः - द्रव्य - क्षेत्र - काल - भाव की मर्यादा को लिए हुए, विपरीत रूप से; रूपी पदार्थ को जानने वाले ज्ञान को कुअवधिज्ञान कहते हैं।

प्रश्न १० - मिथ्याज्ञानों से क्या हानि है?

उत्तर - मिथ्याज्ञान के कारण यह जीव दुखद चारों गतियों में अपने स्वरूप

को भूलकर परिभ्रमण कर रहा है। पर-कर्तव्य-भोक्तृत्व में फंसा हुआ है, पर को अपना मान कर संक्लेशित हो रहा है। मिथ्या ज्ञान के वशीभूत होकर ही मरीचि ने ३६३ मिथ्यामतों की स्थापना की थी, जिसके फलस्वरूप सागरों पर्यन्त चारों गतियों में अनिर्वचनीय दु:ख सहन करने पड़े थे।

प्रश्न ११ - सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति कब होती है?

उत्तर - सम्यग्दर्शन की उपलब्धि के साथ सम्यग्ज्ञान की प्रप्ति स्वाभाविक हो जाती है।

प्रश्न १२ - सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति से क्या लाभ है?

उत्तर - सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति के साथ ही भेदज्ञान हो जाता है। सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होने पर नय पक्षपात समाप्त हो जाता है, सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होते ही वैराग्य वर्द्धक सम्पूर्ण क्रियायें सम्यक्त्वाचरण का रूप पा लेती हैं।

३. सम्यक्चारित्र

प्रश्न १ - सम्यक्चारित्र किसे कहते हैं?

उत्तर - १.सम्यग्ज्ञानियों को पापास्रव के कारण भूत; पाँच पापों का त्याग करना सम्यक्चारित्र है।

२.अशुभ कर्म से निर्वृत्ति एवं शुभकर्म में प्रवृत्ति का नाम सम्यक्चारित्र है।

३.जो सम्यग्ज्ञानी पुरुष, संसार के कारणों को दूर करने के लिए उद्यत हैं; उनके कर्मों के ग्रहण करने में निमित्त भूत क्रियाओं के त्याग को सम्यक्चारित्र कहते हैं।

प्रश्न २ - सम्यक्चारित्र के कितने भेद हैं?

उत्तर - सम्यक्चारित्र के दो भेद हैं -१.सकल चारित्र; २.विकल चारित्र।

प्रश्न ३ - सकल चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - मुनियों के व्रतों को सकल चारित्र कहते हैं ।

प्रश्न ४ - विकल चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - श्रावकों के व्रतों को विकल चारित्र कहते हैं ।

प्रश्न ५ - मुनियों के कितने भेद हैं ?

उत्तर - मुनियों के पाँच भेद है - १. पुलाक; २. बकुश; ३. कुशील; ४. निर्ग्रन्थ; ५. स्नातक ।

प्रश्न ६ - पुलाक मुनि किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो मुनि; अट्ठाईस मूल को भी पूर्णरूप से नहीं पालते तथा उत्तर-गुणों की भी साधना नहीं करते, ऐसे भाव लिंगी पुलाक मुनि कहलाते हैं ।

प्रश्न ७ - उत्तर-गुण किसे कहते हैं एवं कितने होते हैं ?

उत्तर - कर्मों की विशेष निर्जरा में जो हेतु हैं, वे उत्तर-गुण कहलाते हैं। २२ परिषह एवं १२ तप मिलाकर ३४ उत्तर-गुण हैं।

प्रश्न ८ - बकुश मुनि किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो मुनि; मूल एवं उत्तर-गुण को पालते हैं, लेकिन शरीर-उपकरण (पीछि, कमण्डलु) तथा शास्त्र-जिनालय आदि के मोह से युक्त है, ऐसे भाव लिंगी बकुश मुनि कहलाते हैं ।

प्रश्न ९ - कुशील मुनि किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो मुनि; मूलगुण को तो पूर्णरूप से पालते हैं, लेकिन उत्तरगुणों की विराधना करते हैं तथा जो संज्वलन कषाय के वश में रहते है, वे मुनि कुशील कहलाते हैं ।

प्रश्न १० - निर्ग्रन्थ मुनि किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिन्हे अन्तर्मुहुर्त बाद केवल ज्ञान-केवलदर्शन होने वाला है, ऐसे मुनि को निर्ग्रन्थ मुनि कहते हैं।

प्रश्न ११ - स्नातक मुनि किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिन्होंने चार घातिया कर्मों को नाश कर दिया है, ऐसे सयोग-केवलि एवं अयोग-केवलि; स्नातक मुनि कहलाते हैं।

प्रश्न १२ - श्रावकों के कितने भेद हैं ?

उत्तर - श्रावकों के तीन भेद हैं - १. पाक्षिक; २. नैष्ठिक; ३. साधक । इन तीनों का विवेचन भाग तीन में किया गया है ।

४. जिनवाणी

प्रश्न १ - जिनवाणी किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो जिनेन्द्र देव – तीर्थङ्कर के मुख से निकली तथा जिसे गणधरों ने ग्रहण की तथा परम्पराचार्यों द्वारा जिसका प्रचार-प्रसार हुआ है, ऐसी वाणी को जिनवाणी कहते हैं ।

प्रश्न २ - जिनेन्द्र देव की वाणी ही जिनवाणी क्यों है ?

उत्तर - जिनेन्द्र देव ने विश्व के समस्त चराचर पदार्थों को अपने केवलज्ञान में देखा है । उसी आधार पर तत्त्व - द्रव्य - पदार्थों की व्याख्या - न्यूनता रहित, अधिकता रहित, जैसे का तैसा, विपरीतता रहित, संदेह रहित है, अतः जिनेन्द्र देव की वाणी ही जिनवाणी है ।

प्रश्न ३ - जिनवाणी के कितने भेद हैं, नाम लिखो ?

उत्तर - जिनवाणी के भेद; चार अनुयोग हैं -
१. प्रथमानुयोग; २. करणानुयोग; ३. चरणानुयोग; ४. द्रव्यानुयोग ।

प्रश्न ४ - अनुयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - ज्ञान के साधन-क्रम को अनुयोग कहते हैं ।

प्रश्न ५ - प्रथमानुयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिन ग्रन्थों में चारों पुरुषार्थों की सच्ची व्याख्या है; ऐसे पुण्य-पुरुषों के चरित्र एवं पुराण हैं। जो पढ़ने-सुनने वाले को पुण्य-ज्ञान-समाधि के खजाने स्वरूप है, प्रथमानुयोग कहलाता है ।

प्रश्न ६ - प्रथमानुयोग के कुछ ग्रन्थों के नाम; उनके रचयिता सहित बताओ ?

उत्तर - पद्मपुराण (जैन रामायण) रविषेणाचार्य ।

आदि पुराण (तीर्थङ्कर आदिनाथ चरित्र) जिनसेनाचार्य (द्वितीय)।
उत्तर पुराण (तेईस तीर्थङ्कर चरित्र) गुणभद्राचार्य।
हरिवंश पुराण (श्रीकृष्ण चरित्र) जिनसेनाचार्य (प्रथम)।
पाण्डव पुराण (जैन महाभारत) शुभचन्द्राचार्य।
श्रेणिक चरित्र (राजा श्रेणिक) सकलकीर्ति आचार्य।
श्रीपाल चरित्र (श्रीपाल राजा) सकलकीर्ति आचार्य।
धर्म परीक्षा (सब धर्मों की परीक्षा) अमितगति आचार्य आदि अनेक ग्रन्थ हैं।

प्रश्न ७ - करणानुयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - करण अर्थात् भाव या परिणाम। जिन ग्रन्थों में भाव या परिणाम की व्याख्या की गई हो अथवा लोक - अलोक का विभाग, युगों का परिवर्तन, चतुर्गति की अवस्था का ज्ञान हो, उन ग्रन्थों को करणानुयोग या गणितानुयोग भी कहते हैं।

प्रश्न ८ - करणानुयोग के कुछ ग्रन्थों के नाम; उनके रचयिता सहित बताओ ?

उत्तर -

षट्खण्डागम	- आचार्य पुष्पदन्त - भूतबलि।
तिलोय पण्णत्ति	- आचार्य यतिवृषभ।
त्रिलोकसार	- सिद्धान्त चक्रवर्ति नेमिचन्द्राचार्य।
जीव काण्ड	- सिद्धान्त चक्रवर्ति नेमिचन्द्राचार्य।
कर्म काण्ड	- सिद्धान्त चक्रवर्ति नेमिचन्द्राचार्य।
पंच संग्रह	- सिद्धन्त चक्रवर्ति नेमिचन्द्राचार्य।
क्षपणासार	- सिद्धन्त चक्रवर्ति नेमिचन्द्राचार्य।
सिद्धान्तसार दीपक	- भट्टारक सकलकीर्ति आचार्य।

प्रश्न ९ - चरणानुयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिन ग्रन्थों में श्रावक एवं साधुओं के चारित्र की उत्पत्ति, वृद्धि एवं रक्षा के उपायों का वर्णन किया गया है, उन ग्रन्थों को चरणानुयोग कहते हैं।

प्रश्न १० - चरणानुयोग के कुछ ग्रन्थों के नाम; उनके रचयिता सहित बताओ ?

उत्तर - रयणसार - कुन्दकुन्दाचार्यकृत ।
रत्नकरण्ड श्रावकाचार - स्वामी समन्तभद्राचार्य ।
सागार धर्मामृत - पण्डित आशाधर जी ।
अमितगति श्रावकाचार - अमितगति आचार्य ।
वसुनन्दि श्रावकाचार - वसुनन्दी आचार्य ।
चारित्र सार - चामुण्डराय ।
पुरुषार्थ सिध्द्युपाय - अमृत चन्द्राचार्य ।
मूलाचार (साधुओं का) - वट्टकेर - कुन्दकुन्दाचार्य ।
मूलाचार प्रदीप (साधुओं का) - भट्टारक सकल कीर्ति ।
भगवती आराधना (साधुओं का) - शिवकोटि आचार्य ।
अनगार धर्मामृत (साधुओं का) - पण्डित आशाधर जी ।

प्रश्न ११ - द्रव्यानुयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिन ग्रन्थों में जीव-अजीव, पुण्य-पाप, बन्ध-मोक्ष की आध्यात्मिक प्ररूपणा है, उन ग्रन्थों को द्रव्यानुयोग कहते हैं ।

प्रश्न १२ - द्रव्यानुयोग के कुछ ग्रन्थों के नाम; उनके रचयिता सहित बताओ ?

उत्तर - समयसार - कुन्दकुन्दाचार्य ।
प्रवचनसार - कुन्दकुन्दाचार्य ।
नियमसार - कुन्दकुन्दाचार्य ।
पंचास्तिकाय - कुन्दकुन्दाचार्य ।
द्रव्य संग्रह - नेमीचन्द्राचार्य ।
तत्त्वार्थ सूत्र - उमास्वामी आचार्य ।
इष्टोपदेश - पूज्यपादाचार्य ।

७ - सूतक - पातक - विधान

प्रश्न १ - सूतक-पातक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जन्म की अशुद्धि को सूतक एवं मरण की अशुद्धि को पातक कहते हैं ।

प्रश्न २ - सूतक-पातक में क्या-क्या नहीं करना चाहिए ?

उत्तर - सूतक - पातक में देव - शास्त्र - गुरु का पूजन - प्रक्षालन, स्वाध्याय (जिनवाणी नहीं छूना) गुरुओं के चरण स्पर्श नहीं करना चाहिए तथा मन्दिर जी के जाजम (बिछाई) चिटाई, आसन, वस्त्रादि को नहीं छूना चाहिए ।

प्रश्न ३ - सूतक-पातक किसको कहाँ नहीं लगता ?

उत्तर - जिस कुल वाला यज्ञनायक — जिनबिम्ब प्रतिष्ठा या महाविधान करा रहा हो या इन्द्र आदि बनकर विधान में सम्मिलित हो, उसके इन्द्र प्रतिष्ठा होने के बाद उसके कुल-वंश में सूतक-पातक नहीं लगता हैं ।

प्रश्न ४ - वर्ण व्यवस्था क्रम से पातक कितने दिनों का है ?

उत्तर - ब्राह्मण ५ दिन; क्षत्रिय १० दिन; वैश्य १२ दिन तथा शूद्र १५ दिन में पातक दोष से शुद्ध होते हैं ।

प्रश्न ५ - व्रती-श्रावकों को सूतक-पातक की क्या व्यवस्था है ?

उत्तर - व्रती-श्रावकों को अपने भोजन की शुद्धि रखने के लिए; सूतक - पातक वालों के यहाँ भोजन नहीं करना चाहिए ।

प्रश्न ६ - लौकिक अशुचिता (अपवित्रता) क्या है और उसको दूर कैसे किया जा सकता है ?

उत्तर - विषय-सेवन (मैथुन) से, अन्त्येष्टि से, चाण्डाल के स्पर्श से, क्षौरकर्म (बाल बनवाने) से, रजस्वला स्त्री (माहवारी) के स्पर्श से उत्पन्न

अशुचिता; सवस्त्र (वस्त्र सहित) स्नान से शुद्धि होती है। गीले मांस, हड्डी, नाक, कान,आँख का मल एवं खून को स्पर्श करने पर; हाथ को शुद्ध जल से धोना। लघुशंका जाने के बाद; इन्द्रिय तथा हाथ को शुद्ध जल से धोना। दीर्घशंका जाने के बाद मलद्वार (गुदा) को मिट्‌टी से धोना तथा हाथ को तीन बार मिट्टी से माँजना लौकिक शुद्धि है।

प्रचलित सूतक - पातक शुद्धि प्रमाण काल

क्र. कब तक	जन्म	मरण	स्थिति विशेष	जन्म-मरण
१. ३ पीढ़ी तक	१० दिन;	१२ दिन	१ माह के बालक का	१ दिन
२. ४ पीढ़ी तक	१० दिन;	६ दिन	८ वर्ष के बालक का	३ दिन
३. ५ पीढ़ी तक	६ दिन;	६ दिन	३ माह के गर्भपात का	३ दिन
४. ६ पीढ़ी तक	४ दिन;	४ दिन	जितने माह का गर्भपात हो	उतने दिन
५. ७ पीढ़ी तक	३ दिन;	३ दिन	रजस्वला को (माहवारी)	३ दिन
६. ८ पीढ़ी तक	१ दिन;	१ दिन	गृहत्यागी सन्यासी (२४ घण्टे)	१ दिन
७. ९ पीढ़ी तक	२ पहर (६ घण्टे)	२ पहर	गृहस्थी परदेश में खबर आने के पीछे - अवशेष दिन	
८. अपघात का (आत्महत्या)	६ महीने		(जिस घर का संयुक्त व्यक्ति हो, उसी के परिवार को)	
९. पुत्री-दासी घर में प्रसूत करे या मृत हों	१ दिन	१ दिन	३ दिन घर से बाहर जन्में मरे तो सूतक - पातक नहीं।	
१०. गाय - भैंस, बकरी, पालतू कुतिया-कुत्ता, बिल्ली, तोता-मैना; घर में प्रसूत करें-मृत हों।	१ दिन		१ दिन घर के बाहर जन्में-मरें तो सूतक - पातक नहीं।	

पाठ-अभ्यास

प्रज्ञाश्रमण मुनि

पाठ-अभ्यास

प्रज्ञाश्रमण मुनि

पाठ-अभ्यास

प्रज्ञाश्रमण मुनि